International Journal of Education and Science Research Review
E- ISSN 2348-6457
Volume-1, Issue-6 December- 2014 P- ISSN2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

जिद्दू कृष्णमूर्ति का शिक्षा दर्शन

अनुसंधान कर्त्ता–
कमल कुमार शर्मा
श्री जगदीश प्रसाद झाबरमल टिबरेवाला विश्वविद्यालय
झुंझुनूं, राजस्थान

शोध निर्देशक–
डॉ.श्यामसुन्दर कौशिक
पूर्व प्रभागाध्यक्ष
सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण
जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, चूरू(राज.)

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता की साठवीं वर्षगांठ के अवसर पर समाज, संस्कृति, राजनीति और अर्थव्यवस्था पर निर्णायक भूमिका निर्वाह करने वाली 60 विभूतियां(सुपर सिम्सटी) चयनित किये गये।उक्त 60 विभूतियों में दर्शन आध्यातमिक जीवन व शिक्षा में मौलिक विचार जिद्दू कृष्णमूर्ति का चयन किया गया । ये विलक्षण व्यक्तित्व के धनी थे। इनके विलक्षण व्यक्तित्व का प्रभाव है कि जॉर्ज वर्नाड शाह ने माना ''कृष्णामूर्ति जैसा सुन्दर व्यक्ति दूसरा नहीं देखा''इसी प्रकार आचार्य रजनीश ने अपने शिष्यों से कहा ''कृष्ण मुर्ति एक सजग व्यक्ति है जाओ उसके चरणो में बैठो।''
कृष्णमूर्ति का जन्म 11 मई 1895 को आन्द्रप्रदेश के चितूर जिले में मदनपल्ली में हुआ था। इनकी माता संजीवग्या, पिता जिद्दू नारायणीय थे। आठवीं संतान होने के कारण इनका नाम कृष्णमूर्ति रखा गया। इनके गांव का नाम जिद्दू होने कारण इनका नाम जिद्दू कृष्णमूर्ति रखा गया। 1905 में इनकी माता के देहांत हाने पर पिता नारायणीय थियोसोफिकल सोसायटी की अध्यक्षा श्रीमती एनीबेसेन्ट के आमन्त्रण पर मद्रास के अड्यार में स्थित थियोसोफिकल सोसायटी परिसर में रहने लगे। जिद्दू की विलक्षणता के कारण इनको आगामी विश्व शिक्षक के रूप में देखा । अतः इन्हें, उनके भाई नित्यानन्द ने 1909 में अपने संरक्षण में लिया।

युवा कृष्णमूर्ति की अध्यक्षता में सन 1911 में ' आर्डर आफॅ द स्टार इन ईस्ट'' नामक संस्था की स्थापना अड्यार में की गयी। संगठन के सदस्य स्वंय को विश्व में '' जगतगुरू'' के आगमन हेतु तैयार करने के लिए समर्पित थे। जगतगुरू की भावी भूमिका हेतु प्रशिक्षण के लिए कृष्णमुर्ति व इनके भाई नित्यानन्द को इंग्लेण्ड भेजा गया। इन्हें प्रशिक्षित करने के लिए समुचित व्यवस्था की गयी ताकि ये आध्यात्मिक व पश्चिमी सभ्यता दोनो में प्राशिक्षित हो सके । ये 1920 में फ्रांस गये। वहां फ्रेंच सीखी उसके पश्चात् 1921 में श्रीमती एनीबेसेन्ट के साथ वापस अड्यार आ गये । इसी समय सार्वजनिके रूप से कृष्णमूर्ति की पहचान बनी, 1925 में इनके भाई का देहान्त हो गया। इस घटना से ये पूर्णतः रूपान्तरित हो गये। वे गुरू व सम्प्रदाय के पूर्णतः विरोधी हो गये। अतः इन्होंने श्रीमती एनीबेसेन्ट व 3000 सदस्यों की उपस्थिति में 18 वर्ष पूर्व स्थापित संगठन '' आर्डर आफॅ द स्टार इन ईस्ट '' को भंग कर दिया तथा थियोसोफिकल सोसायटी से त्याग पत्र दे दिया।

द्वितीय विश्व युद्ध के समय कैलीफोर्निया में रहे। इसके पश्चात इन्होंने सम्पूर्ण विश्व में भ्रमण किया, सार्वजनिक सभाएं, साक्षात्कार ' निजी विवेचनाओं से वाद–विवाद व लेखन कार्य किया । ये कार्य इन्होंने गुरू के रूप में नहीं मात्र सत्यानवेषी, पथ प्रदर्शक व मित्र के रूप में किये। भारत सहित इंग्लेण्ड में इन्होंने विशेष विद्यालय खोले, नवम्बर 1985 में भारत अन्तिम बार आये, 1986 ई.में अस्वस्थ हो गये, 17 फरवरी 1986 में इनका शरीर शान्त हो गया। शिक्षा के रूप में कृष्णमूर्ति के अनुसार सम्यक शिक्षा के माध्यम से बालक का समग्र विकास करना चाहिए । सम्यक शिक्षा ऐसी शिक्षा जिसमें वैज्ञानिक और धार्मिकता, कला और विज्ञान होता है। समग्र विकास से तात्पर्य मनुष्य का मन व्यक्ति से समाज में आधारभूत मनौवेज्ञानिक रूपान्तरण है। इनके अनुसार 'तुम ही विश्व हो ' अतः मानव मन में सृजनात्मक क्रान्ति के द्वारा जीवन के प्रति समग्र दृष्टिकोण उत्पन करना ही जीवन है ।

शिक्षा का अर्थ (डमंदपदह वि मकनबंजपवद) –

कृष्णमूर्ति ने अपनी पुस्तक 'लाइफ अहेड' से बताया है कि सम्यक शिक्षा और समग्र विकास में सीखना सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। उन्होंने सीखने के अर्थ को स्प्ष्ट करते हुए कहा कि सीखने का तात्पर्य केवल जानकारी का संग्रह करना नहीं बल्कि गहरी समझ का होना है, ज्ञान उपलब्धता करना, तथ्यों को एकत्रित करना उन्हे परस्पर सम्बन्धित करना अथवा पुस्तकों और सूचनाओं के द्वारा ज्ञान संकलित करना ही शिक्षा नहीं है । यहां शिक्षा का अर्थ वास्तविक रूप से समझना है। उनका विचार है कि शिक्षा का वास्तविक अर्थ स्वंय को समझना है। उनका विचार ''स्वंय से जानने'' से मेरा आशय प्रत्येक शब्द, प्रत्येक भाव को जानना मन के क्रिया कलापों को जानना न कि किसी महान एवं विशाल को जानना ।
शिक्षा का उद्देश्य (व्इरमबजपअम वि जिम मकनबंजपवद द्ध– व्यक्ति स्वंय को समझे उसके लिए शिक्षाके उद्देश्य अधोलिखितहै।
जीवन के प्रति समग्र दृष्टिकोण विकसित करना ।

बालक में रचनात्मकता 'जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करना ।
बालकों में प्रतिस्पर्द्धा के स्थान पर सहयोग की भावना का विकास करना ।
शिक्षण विधि(डमजीवकवसवहल वि जमंबीपदह) –सीखने की क्रिया का स्पष्ट अवलोकन सम्भव है अवलोकन मात्र बाहर की वस्तुओं का सम्भव है। सीखने की प्रक्रिया में बालक में भीतर धटित संक्रिया का भी अवलोकन होना चाहिए। यहां सभी पक्षों का अवलोकन बालक के मन की स्वतन्त्रता को समाप्त करता है । निरीक्षण बालक का विषय से सम्बन्ध स्थापित करना, संवाद, परिचर्चा ऐसी विधियां हैं जिनके माध्यम से बालक को ज्ञान व सूचना सीखने के लिए उपलब्ध होती हैं। इससे वह स्वंय प्रयास एंव स्वंय अध्ययन के लिए प्रेरित होता है। बालक में आलोचनात्मक चिन्तन की स्थिति उत्पन करना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए हमें बालक को स्वंय त्रुटि करने व स्वतन्त्र वातावरण में सीखने के अवसर प्रदान करने चाहिए ।

तकनीकी शिक्षा–

कृष्णमूर्ति ने तकनीकी शिक्षा को महत्तव नहीं दिया हैं । तकनीकी शिक्षा को अनुचित शिक्षण से इन्होनें रेखांकित किया है। पढ़ने लिखने का ज्ञान होना अभियान्त्रिकी या कोई और कार्य सीखना स्पष्ट रूप से आवश्यक है, परन्तु क्या तकनीकी हमें जीवन को समझाने की क्षमता प्रदान करेगी, निःसन्देह तकनीकी गौण है, परन्तु यदि तकनीकी वह वस्तु है, जिसे प्राप्त करने में हम लगे हैं, तो स्पष्ट है वास्तविकता को अस्वीकार कर रहे हैं।वर्तमान समय में तकनीकी शिक्षा का महत्व अत्याधिक बढ़ गया है परन्तु जीवन के भावनात्मक पक्ष को समझे बिना केवल कार्य कुशलता का विकास करने से समाज में असुरक्षा भय और अशान्ति का वातावरण बन रहा है। इस प्रकार तकनीकी ज्ञान हमारे मनोवैज्ञानिक दबावों का समाधान नहीं कर रहा है। यह विनाश का कारण बन रहा है । सम्यक शिक्षा तकनीकी के साथ समग्रता को महत्व देती है। समग्र विकास से तात्पर्य बालक का सर्वांगीण विकास के एक पक्ष का दूसरे पक्ष के विकास पर नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए ।
बालक और शिक्षक –बालक को गुरू की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । आनन्दमयी मां से इसका कारण पूछने से स्पष्ट है ''क्योंकि गुरू लोग लाठी का प्रयोग करते हैं ।'' जबकि सीखने में स्व प्रयास व स्व विवेक की आवश्यकता है। श्री कृष्णमूर्ति ने अपनी पुस्तक शिक्षा संवाद में एक अच्छे अध्यापक के विषय में लिखा है एक शिक्षक के हृदय में चिन्ता है कि कैसे एक नवीन मन में एक नयी संवेदना को, वृक्षों, आकाशों, .स्वर्गों झरनों के लिए एक नवीन अनुभुति को उत्पन्न किया जाये। वस्तुतः शिक्षा मात्र विषय की जानकारी नहीं बल्कि प्रकृति का रसास्वादन है।
अध्यापक किसी शिक्षण विधि पर निर्भर नहीं हो, वह अपने शिष्य को पढ़े। वो बालक की जिज्ञासा का आदर करे । उसे अन्वेषण (खोज) के लिए प्रेरित करे । उसका कर्तव्य है कि बालकों को आदर्श के आवरण '' क्या होना चाहिए'' से दूर रखे। बालक पूर्व निर्मित ढांचे में नहीं गढना चाहिए इससे निजता अवरूद्द होती है। बालकों में परस्पर तुलना नहीं करनी चाहिए इससे प्रतिस्पर्दा में द्वेषता उत्पन्न होती है, तुलना के बिना जीने से अखण्डता उपलब्ध होती है । बालक की उपलब्धि प्रतिवेदन अनुचित है इससे अभिभावक बालकों पर दबाव डालते हैं।

निष्कर्ष –

सीखने की प्रक्रिया में तुलना व मूल्याकंन का कोई स्थान नहीं है, नहीं कोई सता का स्थान है, शिक्षार्थी साथ मिलकर सीखते हैं । इससे जीवन में समग्रता आती है। अर्थात शिक्षक व शिक्षार्थी के मध्य स्नेह व सहयोग का सम्बन्ध होना चाहिए ।
अनुशासन – स्वतन्त्रता से मनुष्य पूर्ण विकसित होकर वास्तव में मनुष्य बनता है। अतः कृष्ण मूर्ति बालक को स्वन्त्रता देने के समर्थक हैं अनुशासन के स्थान पर व्यवस्था को उचित मानते हैं। क्योंकि अनुशासन में आज्ञा पालन है जबकि व्यवस्था में स्वतंत्रता है। यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता बिना व्यवस्था के आ ही नहीं सकती है । भय, दण्ड आधारित शिक्षा सीखने में बाधा उत्पन्न करती है। क्योंकि ये बालक की जिज्ञासा, बुद्धि, चहलकदमी पर नकरात्मक प्रभाव डालती है। शिक्षा का उद्देश्य आर्थिक विकास के लिए ही नहीं अपितु मानव विकास के लिए है। अतः मनुष्य के आनन्द को पूर्णता में देखना चाहिए । शारीरिक स्वास्थ्य व सुख भले ही आनन्द का छोटा हिसा है परन्तु महत्वपूर्ण है। अतः आवश्यक है हम दण्ड व भय को छोडकर ऐसी व्यवस्था अजमाएं, जिसमें बालक वही पढे जिसमें आनन्द मिले यह आनन्द बालक के लिए उत्प्रेरक का कार्य करगा ।

विद्यालय –

विद्यालय मात्र शैक्षिक दृष्टि से श्रेष्ठ नहीं, अपितु समग्र मानव के निमार्ण के लिए श्रेष्ठ बनें । कृष्णमूर्ति अनुसार विद्यालय ''वह स्थान होना चाहिए जहां बालक मूलरूप से प्रसन्न व आनन्दित हो, उसे डराया, धमकाया नहीं जाए । वह परीक्षाओं से भयभित नहीं हो, विद्यालय ऐसा स्थान होना चाहिए जहां विधार्थी का आन्तरिक रूपान्तरण हो उन्हें ऐसी जीवन शैली सीखाई जाये जिसका महत्व व उपयोगिता समयक हो। यह आवश्यक है कि शिक्षक व विधार्थी स्वंय को आन्तरिक व मनोवैज्ञानिक रूप से सुरक्षित अनुभव करे। क्योकिं तभी उनका पूरा उपयोग लिया जा सकता है, व्यक्ति से समाज है। अतः व्यक्ति में शिक्षा से ही अनुकूल परिर्वतन लाकर समाज में सकरात्मक परिर्वतन सम्भव है, शिक्षा से ही हिंसात्मक समाज के स्थान पर नवीन समाज का निर्माण किया जा सकता है।

सन्दर्भ–

1. कृष्णमूर्ति जे. 1996'' सत्य एक पथहीन भूमि '' वाराणसी कृष्णमूर्ति परिषद
2. कृष्णमूर्ति जे. 1997''ध्यान में मन''वाराणसी जे. कृष्णमूर्ति फाउन्डेशन
3. कृष्णमूर्ति जे. 1998'' स्कूलों के नाम पत्र'' जिद्दूकृष्णमूर्ति फाउण्डेसन इंडिया, जे. जिद्दूकृष्णमूर्ति एक परिचय वाराणसी, जे. जिद्दूकृष्णमूर्ति एक जीवन परिचय एंव रचनांए वाराणसी,जे. जिद्दूकृष्णमूति परिसंवाद वर्ष–1 अंक–4जून 2007 वाराणसी ।
4. विश्वकर्मा एम. आर. 1995 जे. कृष्णमूर्ति का शिक्षा दर्शन वाराणसी प्रज्ञा एंव दिव्या प्रकाशन ।
5. सरस्वती अग्रवाल (2008) ''जिद्दूकृष्णमूर्ति का शिक्षा दर्शन '' परिप्रेक्ष्य वर्ष 15 अंक–2 पृष्ठ 130. ।